समादर दृष्टि और तुलनात्मक अध्ययन एवं अनुसंधानकी व्यापकता, विशेषताओंका सागर हिलोरें लेता दिखलाई पड़ता है जो किसी भी विद्वान्के मनमें उनके प्रति गौरव और आदरके भाव उत्पन्न करनेके लिए पर्याप्त है। वस्तुतः प्रस्तुत ग्रन्थ तथा अन्य अनेक ग्रन्थोंके सम्पादन कार्य, मौलिक चिन्तन और लेखन कार्यों के मूल्यांकनने श्रेष्ठ भारतीय दार्शनिकोंकी पंक्तिमें सम्मिलित न्यायाचार्य जी एक प्रकाशमान नक्षत्रकी तरह दिखलाई देते रहेंगे।

●

डॉ० महेन्द्रकुमारजी द्वारा सम्पादित न्यायकुमुदचन्द्र

• डॉ० जयकुमार जैन, मुजफ्फरनगर

पण्डित महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य प्राचीन संस्कृत ग्रंथोंके सम्पादन-कार्यमें निपुण थे। उनके द्वारा प्राचीन आचार्योंकी हस्तलिखित जैन न्याय विषयक अनेक कृतियोंका उद्धार हुआ है। उन्हींमें-से आचार्य अकलंकदेव द्वारा रचित लघीयस्त्रयकी कारिकाओंपर आचार्य प्रभाचन्द्र द्वारा रचित लगभग बीस सहस्र पद्य प्रमाण न्यायकुमुदचन्द्र नामक टीकाका सम्पादन एवं संशोधन उनके जैन एवं जैनेतर न्याय विषयक ज्ञान का उद्घोष करता है।

प्रस्तुत ग्रन्थ श्री माणिकचन्द्र दिगम्बर जैन ग्रन्थमाला, बम्बईसे सुप्रसिद्ध इतिहासज्ञ पं० नाथूराम जी प्रेमीके मन्त्रित्व कालमें सन् १९३८ एवं १९४१ में क्रमशः दो भागोंमें ३८वें एवं ३९वें पुष्पके रूपमें प्रकाशित हुआ है।

न्यायकुमुदचन्द्रके सम्पादन एवं संशोधनमें आदरणीय पण्डितजीके द्वारा जैन एवं जैनेतर ग्रन्थोंसे लिये गये विविध टिप्पण सम्पादनका मूल हार्द हैं। इन टिप्पणोंके माध्यमसे अनेक दार्शनिक एवं ऐतिहासिक गुत्थियोंका स्पष्टीकरण तो हुआ ही है, साथ ही समालोचनात्मक अध्ययन करनेवाले शोधी-खोजी विद्वानों के लिए बहुमूल्य शोधात्मक सामग्री प्रस्तुत की गई है। इन टिप्पणोंसे एक अन्य लाभ यह हुआ है कि अनेक आचार्योंके काल निर्धारणमें पर्याप्त सहायता मिली है और लेखन शैली तथा विद्वानों/आचार्यों द्वारा परस्पर आदान-प्रदान की गई सामग्रीका आकलन हुआ है।

मूल ग्रन्थमें अनेक आचार्योंके नामोल्लेखपूर्वक आये हुये उद्धरणोंके माध्यमसे अनेक विलुप्त ग्रन्थों एवं उनके लेखक आचार्योंका पता चला है। इस प्रकार न्यायकुमुदचन्द्रके सम्पादनके व्याजसे समस्त दर्शनों एवं न्याय विषयक विविध प्रस्थानोंका एक ही स्थानपर अच्छा मेल हुआ है। अतः इस ग्रन्थका टिप्पणों सहित अध्ययन करनेसे समग्र भारतीय दर्शनों एवं न्याय विषयक मान्यताओंकी अच्छी जानकारी मिलती है।

सम्पादनकी प्रामाणिकताके लिए आदरणीय पण्डितजीने हस्तलिखित मूल ग्रन्थके एक पृष्ठकी फोटो प्रति भी ग्रन्थमें मुद्रित कराई है।

उपर्युक्त विशेषताओंके अतिरिक्त इस ग्रन्थके प्रारम्भमें प्रथम भागमें स्याद्वाद महाविद्यालय, काशीके पूर्व प्राचार्य एवं जैन जगत्के विश्रुत विद्वान् पं० कैलाशचन्द्र शास्त्रीके द्वारा लिखित प्रस्तावनामें सिद्धि-विनिश्चय एवं प्रमाणसंग्रहका परिचय तथा न्यायकुमुदचन्द्रकी इतर दर्शनोंके ग्रंथोंके साथ तुलना जैसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकरण, जो कि पं० महेन्द्रकुमारजीकी लेखनीसे ही प्रसूत हैं और आचार्य प्रभाचन्द्र के काल निर्धारणमें पर्याप्त सहयोग किया है। साथ ही प्रस्तावनागत (पृ० १२६) अन्य विषयोंके लेखनमें भी पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री-की सहायता की है । इस प्रकार न्यायकुमुदचन्द्रके प्रथम भागको प्रस्तावनाके लेखनमें पं० महेन्द्रकुमारजीका अनन्य सहयोग रहा है ।

न्यायकुमुदचन्द्रके द्वितीय भागकी प्रस्तावना पं० महेन्द्रकुमारजीने स्वतन्त्र रूपसे लिखी है, जिसमें उन्होंने लघीयस्त्रयके रचयिता भट्टाकलंकदेव एवं उसपर न्यायकुमुदचन्द्र नामक टीकाके लेखक आचार्य प्रभा-चन्द्रके समयपर पर्याप्त प्रकाश डाला है। प्रभाचन्द्रकी इतर वैदिक एवं अवैदिक आचार्योंसे जो उन्होंने तुलना की है वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। प्रभाचन्द्रके अन्य ग्रंथोंका परिचय भी उसी प्रस्तावनाका एक अंग है, जिसमें प्रभाचन्द्रके ग्रन्थोंका परिचय देकर उन ग्रन्थोंके प्रभाचन्द्रकृत होनेका सतर्क उल्लेख किया है। इससे प्रस्तावनाका महत्त्व और भी अधिक बढ़ गया है । मूलग्रन्थका दोहन करके लिखी गई यह प्रस्तावना मन्दिरके ऊपर रखे गये कलशकी भाँति सुशोभित है और सटिप्पण मूलग्रन्थका संशोधन एवं सम्पादन तो उनकी प्रतिभाका निदर्शन है ही ।

उपर्युक्तके अतिरिक्त इस प्रस्तावनामें आचार्य प्रभाचन्द्रके ग्रन्थोंका आन्तरिक परीक्षण करके उनके समय आदिपर पूर्वापर दृष्टिसे विचार करते हुये विविध युक्तियों एवं तर्कोंका उल्लेख किया है। इस क्रममें आदरणीय पण्डितजीने आचार्य प्रभाचन्द्रके समय आदिपर जो प्रकाश डाला है वह न केवल इतःपूर्व चिन्तित विद्वानोंके मतोंकी समीक्षा ही करता है, अपितु पण्डित कैलाशचन्द्रजी शास्त्री द्वारा स्थापित शंकाओंको बल देता हुआ उनके मतकी पुष्टि भी करता है ।

अनेकान्तवादको विविध भारतीय दर्शनोंमें महत्त्वपूर्ण स्थान मिल सके, इसके लिये तर्क और युक्तियों से परिपूर्ण वाक्योंका प्रयोग अपेक्षित है । जैनदर्शनका यह अनेकान्तवाद सिद्धान्त मूल रूपसे अहिंसावादको ही दूसरे प्रकारसे पुष्ट करता है। इस सन्दर्भमें गवर्नमेन्ट संस्कृत कॉलेज, बनारसके तत्कालीन प्रिन्सिपल डॉ० मङ्गलदेव शास्त्रीके निम्नाङ्कित विचार (न्यायकुमुदचन्द्र भाग २, आदिवचन पृ० १०) ध्यातव्य हैं। वे लिखते हैं कि जैनधर्मकी भारतीय संस्कृतिको बड़ी भारी देन अहिंसावाद है, जो कि वास्तवमें दार्शनिक भित्तिपर स्थापित अनेकान्तवादका ही नैतिकशास्त्रकी दृष्टिसे अनुवाद कहा जा सकता है ।

उपर्युक्त उल्लिखित विविध बिन्दुओंपर विचार करनेपर हम इस निष्कर्षपर पहुँचते हैं कि पं० महेन्द्रकुमारजी न्यायाचार्यकी प्रतिभा अद्भुत् थी ।

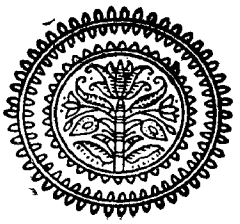

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org